भारतीय कृषि-रूपांतरण के विभिन्न आयाम: एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ. सन्तराम पाल*

*असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव किसान पी. जी. कॉलेज, बभनान, गोंडा (उ.प्र.)
ई-मेल: spal1190@gmail.com
DOI: doi.org/10.5281/zenodo.23121509
Received on: 28/08/2026 Accepted on: 27/09/2026 Published on: 03/10/2026

सारांश:

भारतीय कृषि रूपांतरण के समाजशास्त्रीय आयामों को विभिन्न श्रेणियों में विभाजित करके समझा जाता है। स्वतंत्रता के बाद जमींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार कानूनों ने पारंपरिक उच्च जातियों के एकाधिकार को तोड़ दिया है। इसके परिणामस्वरूप मध्यवर्ती पिछड़ी जातियों का उदय हुआ, जिन्हें समाजशास्त्री एम.एन. श्रीनिवास ने 'प्रभु जाति' कहा है। कृषि के आधुनिकीकरण ने गांवों की पारंपरिक 'जजमानी व्यवस्था' को समाप्त कर दिया है। अब सामाजिक संबंध पूरी तरह से व्यावसायिक और संविदात्मक हो गए हैं। निर्वाह आधारित खेती अब नकदी फसलों और बाजार-उन्मुख खेती में बदल चुकी है। इसने ग्रामीण समाज को नए वर्गों में बांट दिया है—जैसे समृद्ध पूंजीपति किसान, मध्यम किसान और भूमिहीन कृषि मजदूर। ए.आर. देसाई के अनुसार, इसने ग्रामीण क्षेत्रों में वर्ग चेतना और संघर्ष को बढ़ाया है।ग्रामीण पुरुषों के बड़े पैमाने पर शहरों की ओर पलायन करने के कारण खेती की बागडोर महिलाओं के हाथों में आ गई है। हालांकि, विडंबना यह है कि श्रम में उनकी भागीदारी बढ़ने के बावजूद, समाज में उन्हें भूमि स्वामित्व और निर्णय लेने के अधिकार अभी भी बहुत सीमित मिले हैं। शिक्षा के प्रसार और शहरीकरण के कारण ग्रामीण युवा अब खेती को एक घाटे का और कम प्रतिष्ठा वाला काम मानते हैं, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों से जनसांख्यिकीय पलायन तेजी से बढ़ा है। ग्रामीण समाज अब उपभोक्तावादी संस्कृति की ओर बढ़ रहा है। कर्ज लेकर खेती करना और सामाजिक दिखावे ने किसानों को कर्ज के जाल में फंसा दिया है। मौसम की अनिश्चितता और बाजार के उतार-चढ़ाव के कारण ग्रामीण समाज में मानसिक तनाव और किसानों की आत्महत्या जैसी गंभीर सामाजिक समस्याएं पैदा हुई हैं, जिसने ग्रामीण सामाजिक ताने-बाने को कमजोर किया है।

बीज शब्द: कृषि रूपांतरण, ग्रामीण समाज, हरित क्रांति, कृषक वर्ग, कृषि का व्यावसायीकरण, सतत कृषि।

प्रस्तावना:

"भारत की कृषि जनगणना में परिचालन जोत को कृषि उत्पादन के लिए एक तकनीकी इकाई के रूप में देखा जाता है और कृषि संरचना, सिंचाई, भूमि-उपयोग, फसल प्रतिरूप तथा निवेश आदि को समझने के लिए कृषि जनगणना महत्त्वपूर्ण

स्रोत है।"[1] भारतीय ग्रामीण समाज की संरचना को कृषि से अलग करके समझना कठिन है। कृषि केवल खाद्यान्न उत्पादन की आर्थिक गतिविधि नहीं, बल्कि सामाजिक संबंधों, सांस्कृतिक परंपराओं, पारिवारिक संरचनाओं और ग्रामीण सत्ता के संगठन का आधार भी रही है। "भूमि पर नियंत्रण ने लंबे समय तक ग्रामीण समाज में सामाजिक प्रतिष्ठा, आर्थिक शक्ति और राजनीतिक प्रभाव निर्धारित किया है। इसलिए, कृषि में परिवर्तन का अर्थ ग्रामीण समाज के व्यापक सामाजिक रूपांतरण से भी है।"[2] कृषि रूपांतरण की प्रक्रिया को केवल **'कृषि का आधुनिकीकरण'** मानना पर्याप्त नहीं है। कृषि रूपांतरण में उत्पादन संबंधों, संसाधनों के स्वामित्व, श्रम संबंधों, बाजार के विस्तार, तकनीकी परिवर्तन, राज्य की नीतियों तथा ग्रामीण परिवारों की आजीविका रणनीतियों में होने वाले परस्पर संबंधित परिवर्तनों को सम्मिलित किया जाता है। भारतीय संदर्भ में यह प्रक्रिया अत्यंत असमान और बहुआयामी रही है। विभिन्न क्षेत्रों, जातियों, वर्गों और कृषक समूहों ने कृषि परिवर्तन को अलग-अलग ढंग से अनुभव किया है। "भारतीय कृषि में पूर्व-पूंजीवादी संबंधों से पूंजीवादी संबंधों की ओर संक्रमण भी एक समान रेखीय प्रक्रिया नहीं रहा, बल्कि इसके अनेक क्षेत्रीय रूप दिखाई देते हैं।"[3] वर्तमान में कृषि रूपांतरण की अवधारणा और अधिक व्यापक हो गई है। "अब कृषि को केवल खेत और किसान तक सीमित न मानकर संपूर्ण **'एग्री-फूड सिस्टम'** के रूप में देखा जाता है जिसमें उत्पादन, प्रसंस्करण, भंडारण, परिवहन, विपणन, उपभोग और अपशिष्ट प्रबंधन तक की गतिविधियाँ शामिल हैं।"[4] इस प्रकार कृषि रूपांतरण का समाजशास्त्रीय अध्ययन ग्रामीण समाज से आगे बढ़कर बाजार, राज्य, उद्योग, तकनीक और वैश्विक अर्थव्यवस्था के संबंधों का भी अध्ययन बन गया है।

कृषि रूपांतरण की अवधारणा:

'रूपांतरण' का सामान्य अर्थ किसी व्यवस्था की संरचना, उसकी कार्यप्रणाली और संबंधों में गुणात्मक परिवर्तन से है। कृषि रूपांतरण उस प्रक्रिया को कहा जा सकता है जिसके अंतर्गत कृषि की उत्पादन प्रणाली, भूमि-संबंध, श्रम-संबंध, तकनीकि, बाजार, संस्थागत व्यवस्था तथा उससे जुड़े सामाजिक संबंधों में दीर्घकालीन और संरचनात्मक परिवर्तन होते हैं। समाजशास्त्रीय दृष्टि से कृषि रूपांतरण के पाँच प्रमुख आयाम हैं- 1. उत्पादन संबंधों में परिवर्तन 2. भूमि एवं संसाधन संबंधों में परिवर्तन 3. श्रम एवं वर्ग संरचना में परिवर्तन 4. कृषि के बाजार एवं पूंजी से बढ़ते संबंध और 5. ग्रामीण परिवारों की आजीविका संरचना में परिवर्तन। कृषि रूपांतरण में यह देखा जाता है कि परिवर्तन से लाभ किसे प्राप्त होता है और उसकी सामाजिक लागत कौन वहन करता है? कृषि रूपांतरण और ग्रामीण रूपांतरण को एक-दूसरे का पर्याय नहीं माना जा सकता है। ग्रामीण रूपांतरण में कृषि के अतिरिक्त गैर-कृषि रोजगार, शिक्षा, संचार, नगरीकरण, प्रवासन और ग्रामीण सेवा क्षेत्र का विस्तार भी सम्मिलित होता है। "भारत में ग्रामीण परिवर्तन की एक महत्त्वपूर्ण प्रवृत्ति 'डी-एग्रेरियनाइजेशन' की भी रही है

अर्थात् ग्रामीण परिवारों का कृषि से गैर-कृषि गतिविधियों की ओर बढ़ता झुकाव है।"[5] साथ ही, ग्रामीण रूपांतरण को विकास का समानार्थी भी नहीं मन जा सकता है क्योंकि परिवर्तन हमेशा समान रूप से कल्याणकारी नहीं होता है।

कृषि रूपांतरण का सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य:

मार्क्सवादी दृष्टिकोण-

यह दृष्टिकोण कृषि को उत्पादन संबंधों और वर्ग-संघर्ष के संदर्भ में देखता है। भूमि का स्वामित्व, उत्पादन के साधनों पर नियंत्रण और श्रम के शोषण के प्रश्न इसके केंद्र में होते हैं। कृषि के पूंजीवादी रूपांतरण के साथ किसान समुदाय में वर्गीय विभेदीकरण की प्रक्रिया विकसित होती है। "एक ओर पूंजी-संपन्न कृषक वर्ग उभरता है जबकि दूसरी ओर छोटे किसान, भूमिहीन मजदूर या अर्ध-प्रोलेटेरियन वर्ग में परिवर्तित हो सकते हैं।"[6] भारतीय कृषि के संदर्भ में यह प्रक्रिया जटिल रही है क्योंकि वर्ग-संबंध जाति-संबंधों से गहरे रूप में जुड़े हुए हैं इसीलिए भारतीय कृषि समाज का विश्लेषण केवल आर्थिक वर्ग के आधार पर नहीं किया जा सकता है।

वेबरियन एवं सामाजिक स्तरीकरण दृष्टिकोण-

मैक्स वेबर के सामाजिक स्तरीकरण संबंधी विचारों के आधार पर कृषि समाज में आर्थिक वर्ग के साथ-साथ प्रतिष्ठा और राजनीतिक शक्ति को भी समझा जा सकता है। "ग्रामीण समाज में भूमि, जाति, शिक्षा, राजनीतिक संपर्क और स्थानीय संस्थाओं पर नियंत्रण व्यक्ति या समूह की सामाजिक स्थिति निर्धारित करते हैं।[7]

ग्रामीण समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण-

भारतीय ग्रामीण समाजशास्त्र में **एम. एन. श्रीनिवास, ए. आर. देसाई और आंद्रे बेतेइले** जैसे विद्वानों ने ग्रामीण सामाजिक संरचना, जाति, वर्ग और परिवर्तन के संबंधों को समझने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। "श्रीनिवास के 'प्रभुत्वशाली जाति' के सिद्धांत से यह समझने में सहायता मिलती है कि भूमि, संख्या और स्थानीय राजनीतिक शक्ति का संयोजन ग्रामीण सत्ता-संरचना को कैसे प्रभावित करता है।[8] इस दृष्टिकोण से कृषि रूपांतरण को **सामाजिक शक्ति के पुनर्विन्यास की प्रक्रिया** के रूप में भी देखा जा सकता है।

हरित क्रांति और कृषि समाज का रूपांतरण:

"भारत में हरित क्रांति कृषि रूपांतरण की सबसे महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक प्रक्रियाओं में से एक थी। उच्च उत्पादकता वाले बीज, सिंचाई, रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक, कृषि मशीनरी और संस्थागत ऋण के विस्तार ने कृषि उत्पादन में वृद्धि

की। परिणामस्वरूप, अनेक क्षेत्रों में कृषि, बाजार से अधिक गहराई से जुड़ी और कृषि का व्यावसायीकरण बढ़ा। हरित क्रांति के सामाजिक परिणाम समान नहीं थे। जिन किसानों के पास सिंचाई, पूंजी, भूमि और तकनीक तक बेहतर पहुँच थी, वे अपेक्षाकृत अधिक लाभान्वित हुए। दूसरी ओर छोटे एवं सीमांत किसान संसाधनों की कमी के कारण समान लाभ प्राप्त नहीं कर सके। परिणामस्वरूप ग्रामीण समाज में आर्थिक विषमता और वर्गीय विभेदीकरण के नए रूप उभरे।"[9] "हरित क्रांति वाले क्षेत्रों में कृषि श्रम की माँग बढ़ी, भुगतान के स्वरूप में वस्तु से नकद की ओर परिवर्तन हुआ तथा पारंपरिक आश्रय संबंधों में ढील आई। ग्रामीण समाज में स्थायी एवं वंशानुगत श्रम-संबंधों की जगह स्वतंत्र मजदूरी संबंधों का विस्तार हुआ।"[10] इस प्रकार हरित क्रांति ने कृषि उत्पादन बढ़ाने के साथ **ग्रामीण सामाजिक संबंधों को भी पुनर्गठित** किया।

कृषि का व्यावसायीकरण और बाजार संबंध:

कृषि रूपांतरण की एक प्रमुख विशेषता कृषि का बाजार से बढ़ता हुआ संबंध है। पारंपरिक कृषि में उत्पादन का बड़ा हिस्सा परिवार की आवश्यकताओं की पूर्ति में प्रयुक्त होता था जबकि व्यावसायिक कृषि में बाजार के लिए उत्पादन का महत्त्व बढ़ जाता है। व्यावसायीकरण के कारण किसान फसल चयन, निवेश, ऋण, कीमत, बाजार और व्यापारिक जोखिम से अधिक गहराई से जुड़ता है। नकदी फसलों का विस्तार, कृषि-प्रसंस्करण उद्योग, संगठित खुदरा बाजार और कृषि-निर्यात ने कृषि को राष्ट्रीय तथा वैश्विक बाजारों से जोड़ा है। यद्यपि, बाजार से जुड़ाव अवसरों के साथ जोखिम भी पैदा करता है। कृषि उत्पादों की कीमतों में उतार-चढ़ाव, इनपुट लागत में वृद्धि, ऋण पर निर्भरता और मौसम संबंधी अनिश्चितता छोटे किसानों के लिए विशेष चुनौती उत्पन्न करती है। इसीलिए कृषि बाजार का विस्तार अपने आप में सामाजिक न्याय की गारंटी नहीं देता है।

भूमि संरचना और कृषक वर्ग में परिवर्तन:

भूमि भारतीय ग्रामीण समाज में आर्थिक संसाधन होने के साथ सामाजिक शक्ति का भी स्रोत रही है। भूमि के विखंडन, उत्तराधिकार, भूमि-सुधार, पट्टेदारी, खरीद-बिक्री तथा ग्रामीण-शहरी प्रवासन ने भूमि-संबंधों में परिवर्तन किया है। भारत में परिचालन जोतों का औसत आकार दीर्घकाल में घटता गया है। "2010-11 की कृषि जनगणना में औसत परिचालन जोत 1.15 हेक्टेयर थी और कुल परिचालन जोतों में सीमांत जोतों का हिस्सा 67.10 प्रतिशत था।"[11] "वर्तमान कृषि जनगणना 2021-22 के संबंध में भी सरकार ने भूमि, परिचालन जोत, फसल प्रतिरूप, सिंचाई तथा इनपुट उपयोग जैसे आयामों पर व्यापक डेटा-संग्रह की प्रक्रिया संचालित की है।"[12] छोटी जोतों की बढ़ती संख्या कृषिक समाज के सामने एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न प्रस्तुत करती है कि - क्या छोटी जोत आधुनिक कृषि बाजार में प्रतिस्पर्धी रह सकती है? इसका उत्तर केवल

भूमि के आकार में नहीं, बल्कि सिंचाई, तकनीक, ऋण, बाजार, सामूहिक संगठन और गैर-कृषि आय के अवसरों में भी निहित होता है।

कृषि श्रम और ग्रामीण वर्ग-संबंधों में परिवर्तन:

कृषि रूपांतरण का सबसे स्पष्ट प्रभाव कृषि श्रम संबंधों में दिखाई देता है। यंत्रीकरण, फसल विविधीकरण, सिंचाई तथा व्यावसायीकरण ने श्रम की प्रकृति और माँग दोनों को प्रभावित किया है। परंपरागत ग्रामीण समाज में जाति और पेशे के बीच अपेक्षाकृत मजबूत संबंध पाए जाते थे। आधुनिक कृषि ने इस संबंध को कमजोर किया है। कृषि मजदूरी का नकदीकरण, श्रमिकों की गतिशीलता तथा गैर-कृषि रोजगार के अवसरों ने पारंपरिक आश्रय संबंधों को चुनौती दी है। "ओडिशा के कालाहांडी क्षेत्र पर किए गए एक अध्ययन में सिंचाई के विस्तार के साथ उत्पादकता, मजदूरी और प्रति हेक्टेयर श्रम उपयोग में वृद्धि तथा गरीबी और मौसमी संकट-प्रेरित प्रवासन में कमी पाई गई।"[13] इससे स्पष्ट होता है कि कृषि रूपांतरण का सामाजिक प्रभाव केवल उत्पादन वृद्धि से नहीं, बल्कि स्थानीय रोजगार और आजीविका सुरक्षा से भी जुड़ा होता है।

जाति और कृषि रूपांतरण:

भारतीय कृषि समाज में जाति और भूमि संबंधों का ऐतिहासिक संबंध रहा है। कई क्षेत्रों में प्रभावशाली जातियों के पास भूमि और स्थानीय राजनीतिक शक्ति का संकेन्द्रण रहा है। कृषि के आधुनिकीकरण ने इन संबंधों को पूरी तरह समाप्त नहीं किया, बल्कि कई स्थानों पर उनके स्वरूप में परिवर्तन किया। शिक्षा, नगरीकरण, आरक्षण, राजनीतिक लोकतंत्रीकरण तथा गैर-कृषि रोजगार के विस्तार से निम्न एवं पिछड़ी जातियों के लिए सामाजिक गतिशीलता के अवसर बढ़े हैं। फिर भी भूमि तक असमान पहुँच, कृषि मजदूरी और संसाधनों पर नियंत्रण के प्रश्न यथावत बने हुए हैं। इसलिए कृषि रूपांतरण को जाति-निरपेक्ष प्रक्रिया मानना उचित नहीं होगा। कृषि में तकनीकी परिवर्तन की सामाजिक पहुँच जाति, वर्ग, लिंग और क्षेत्रीय असमानताओं से प्रभावित होती है।

कृषि रूपांतरण और लैंगिक संबंध:

ग्रामीण अर्थव्यवस्था में महिलाओं की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। महिलाएँ बुवाई, निराई, कटाई, पशुपालन, बीज संरक्षण, खाद्य प्रसंस्करण तथा घरेलू खाद्य सुरक्षा में महत्त्वपूर्ण योगदान देती हैं। इसके बावजूद भूमि के स्वामित्व, कृषि ऋण, तकनीकी प्रशिक्षण और बाजार तक उनकी पहुँच अपेक्षाकृत सीमित रहती है। कृषि रूपांतरण के साथ महिलाओं की भूमिका दोहरी दिशा में बदल रही है। एक ओर कृषि यंत्रीकरण से कुछ श्रम कार्यों में महिलाओं की माँग कम हो सकती है;

दूसरी ओर स्वयं सहायता समूहों, महिला किसान संगठनों, डेयरी, बागवानी, प्रसंस्करण और सूक्ष्म उद्यमों के माध्यम से नए अवसर भी पैदा हो रहे हैं। समकालीन कृषि-खाद्य प्रणाली के विमर्श में लैंगिक समानता और समावेश को प्रमुख आयाम माना जा रहा है। "खाद्य एवं कृषि संगठन भी भारत में कृषि-खाद्य प्रणालियों के रूपांतरण के लिए लैंगिक उत्तरदायी शासन और समावेशन को प्राथमिकता देता है।"[14]

कृषि-तकनीकि और सामाजिक परिवर्तन:

कृषि यंत्रीकरण ने उत्पादन की गति, श्रम उपयोग और कृषि कार्यों की प्रकृति को परिवर्तित कर दिया है। आधुनिक कृषि उपकरणों के विस्तार ने कृषि को अधिक पूंजी-प्रधान बना दिया है। "अब डिजिटल कृषि एक नई परिवर्तनकारी शक्ति के रूप में उभरी है। रिमोट सेंसिंग, मोबाइल आधारित कृषि परामर्श, डिजिटल वित्त, ई-कॉमर्स, ड्रोन, कृत्रिम बुद्धिमत्ता और सटीक कृषि जैसी तकनीकों से किसानों को मौसम, बाजार, उत्पादन और संसाधन प्रबंधन संबंधी जानकारी प्राप्त हो सकती है।"[15] किन्तु डिजिटल कृषि का लाभ समान रूप से उपलब्ध नहीं है। डिजिटल साक्षरता, इंटरनेट सुविधा, भाषा, आय और तकनीकी उपकरणों तक पहुँच में असमानता के कारण डिजिटल विभाजन पैदा हो सकता है। इसलिए तकनीकी रूपांतरण को सामाजिक समावेशन से जोड़ना आवश्यक है।

कृषि रूपांतरण और प्रवासन:

ग्रामीण भारत में कृषि से गैर-कृषि रोजगार की ओर बढ़ती गतिशीलता कृषि रूपांतरण का महत्त्वपूर्ण पक्ष है। कृषि आय की अनिश्चितता, छोटी जोत, मौसमी बेरोजगारी और बेहतर आय की खोज ग्रामीण युवाओं को शहरों की ओर आकर्षित करती है। प्रवासन को केवल कृषि से पलायन के रूप में देखना उचित नहीं है। अनेक ग्रामीण परिवारों में कृषि और गैर-कृषि रोजगार साथ-साथ चलते हैं। इस प्रकार 'बहु-आजीविका' ग्रामीण परिवारों की एक महत्त्वपूर्ण रणनीति बन रही है। इस प्रक्रिया से ग्रामीण अर्थव्यवस्था में प्रेषण आय, उपभोग और आवास की प्रवृत्ति में परिवर्तन आते हैं और कृषि श्रम की स्थानीय उपलब्धता पर भी प्रभाव पड़ता है।

कृषि रूपांतरण और पर्यावरणीय संकट:

आधुनिक कृषि की उत्पादकता वृद्धि के साथ पर्यावरणीय चुनौतियाँ भी बढ़ी हैं। भूजल का अत्यधिक दोहन, मृदा की उर्वरता में कमी, रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों का असंतुलित प्रयोग, जैव-विविधता का क्षरण और जलवायु परिवर्तन कृषि की स्थिरता को प्रभावित कर रहे हैं। समकालीन विमर्श इसलिए उत्पादकता-केंद्रित कृषि से सतत, लचीली

और पर्यावरण-अनुकूल कृषि की ओर संक्रमण पर बल देता है। "भारत में कृषि-खाद्य प्रणाली में मिट्टी का क्षरण, भूजल का ह्रास, जलवायु जोखिम तथा खाद्य एवं पोषण सुरक्षा को एक साथ देखने की आवश्यकता पर बल दिया गया है।"[6] समाजशास्त्रीय दृष्टि से पर्यावरणीय संकट केवल प्राकृतिक संकट नहीं है। इसका प्रभाव वर्ग, जाति और क्षेत्र के आधार पर अलग-अलग होता है। संसाधन-संपन्न किसान जोखिमों का सामना अपेक्षाकृत बेहतर ढंग से कर सकते हैं जबकि सीमांत किसान जलवायु जोखिम के प्रति अधिक संवेदनशील होते हैं।

कृषि रूपांतरण के अंतर्विरोध:

कृषि रूपांतरण में अनेक सकारात्मक संभावनाएँ हैं- उत्पादन वृद्धि, तकनीकी प्रगति, बाजार विस्तार, रोजगार के नए अवसर और ग्रामीण आय में वृद्धि। लेकिन इसके साथ कई अंतर्विरोध भी मौजूद हैं। पहला, उत्पादकता वृद्धि और सामाजिक समानता के बीच तनाव दिखाई देता है। दूसरी ओर बाजार का विस्तार किसानों को नए अवसर देता है, लेकिन मूल्य अस्थिरता का जोखिम भी बढ़ाता है। तीसरा, यंत्रीकरण श्रम उत्पादकता बढ़ाता है, किंतु अकुशल श्रम की माँग को कम कर सकता है। चौथा, कृषि का व्यावसायीकरण आय के अवसर बढ़ाता है, लेकिन खाद्य सुरक्षा और स्थानीय जैव-विविधता को प्रभावित कर सकता है। पाँचवाँ, डिजिटल तकनीक सूचना की पहुँच बढ़ाती है, किंतु डिजिटल असमानता को भी जन्म दे सकती है। इसलिए कृषि रूपांतरण को न तो केवल आधुनिकीकरण की सफलता के रूप में देखा जाना चाहिए और न ही केवल संकट की प्रक्रिया के रूप में। वास्तव में, यह अवसरों और असमानताओं, स्वायत्तता और निर्भरता तथा विकास और पर्यावरणीय स्थिरता के बीच निरंतर संतुलन की खोज करने वाली एक प्रक्रिया है।

समावेशी कृषि रूपांतरण की आवश्यकता:

समावेशी कृषि रूपांतरण के लिए कृषि नीति को केवल उत्पादन वृद्धि तक सीमित न रखकर सामाजिक न्याय, संसाधन-समानता और पर्यावरणीय स्थिरता से जोड़ना आवश्यक है। छोटे और सीमांत किसानों के लिए सस्ती ऋण सुविधा, सिंचाई, बीमा, तकनीकी प्रशिक्षण, भंडारण तथा बाजार तक पहुँच को मजबूत करना आवश्यक है। किसान उत्पादक संगठन, सहकारी संस्थाएँ और सामुदायिक संगठन छोटे किसानों की सामूहिक सौदेबाजी क्षमता बढ़ा सकते हैं। डिजिटल कृषि का विकास स्थानीय भाषाओं और कम लागत वाली तकनीकों के साथ किया जाना चाहिए। महिला किसानों की भूमि, ऋण, तकनीक और बाजार तक पहुँच को मजबूत करना भी कृषि रूपांतरण को अधिक समावेशी बना सकता है। "खाद्य एवं कृषि संगठन के अनुसार भारत में कृषि-खाद्य प्रणाली के रूपांतरण के लिए उत्पादकता के साथ सतत कृषि उत्पादन, खाद्य एवं

पोषण सुरक्षा, जलवायु लचीलापन तथा समावेशी और लैंगिक-संवेदनशील शासन को एक साथ संबोधित करना आवश्यक है।"[7]

निष्कर्ष:

भारतीय कृषि रूपांतरण के समाजशास्त्रीय अध्ययन का निष्कर्ष यह है कि **कृषि में हुए तकनीकी और आर्थिक विकास ने ग्रामीण समाज को आधुनिक तो बनाया है, लेकिन इसे अधिक न्यायसंगत या समतावादी नहीं बनाया है।** जहाँ एक ओर कृषि आधुनिकीकरण ने देश को खाद्यान्न सुरक्षा दी और एक मजबूत ग्रामीण मध्यम वर्ग को जन्म दिया, वहीं दूसरी ओर इसने **क्षेत्रीय असमानता, तीव्र वर्ग-विभाजन और सामाजिक अलगाव** को भी गहरा किया है। जाति का प्रभाव राजनीति और भूमि पर भले ही बदला हो, लेकिन ग्रामीण समाज में शोषण के नए रूप (जैसे साहूकारी का नया स्वरूप और कॉर्पोरेट कॉन्ट्रैक्ट फार्मिंग का दबाव) सामने आए हैं। यदि हम भारत के ग्रामीण समाज को एक और बड़े संकट से बचाना चाहते हैं, तो कृषि नीतियों का ढांचा केवल 'उत्पादन बढ़ाने' पर केंद्रित नहीं होना चाहिए, बल्कि उसमें **'सामाजिक न्याय'** को शामिल करना होगा। जब तक छोटे किसानों, भूमिहीन मजदूरों और महिला किसानों के अधिकारों को कानूनी व सामाजिक संरक्षण नहीं मिलेगा, तब तक भारतीय कृषि का रूपांतरण समावेशी नहीं कहलाएगा।

संदर्भ:

1. Agricultural Census. (2026). *Agricultural Census 2021–22: Government of India*. Ministry of Agriculture & Farmers Welfare, Government of India.
2. Béteille, A. (1974). Studies in Agrarian Social Structure. Oxford University Press, pp. 56–70.
3. Breman, J. (1974). *Patronage and exploitation: Changing agrarian relations in South Gujarat,* University of California Press.
4. Desai, A.R.(1994). Rural Sociology in India. Popular Prakashan, pp.269–287.
5. Food and Agriculture Organization of the United Nations. (2022). *Transforming food systems in India with digital agriculture*.
6. Food and Agriculture Organization of the United Nations. (2023). *FAO Country Programming Framework for India 2023–2027*.
7. Majumdar (2020). Rural Transformation in India: Deagrarianization and the Transition from a Farming to Non-farming Economy, JDS, 36(2), pp.182–205.
8. Marx, K. (1976). *Capital: A critique of political economy* (Vol. 1). Penguin Books.

9. Patel & Mishra. (2019).“Agrarian Transformation and Changing Labour Relations in Kalahandi, Odisha.” JSAD, 14(3), pp.314–337.
10. Srinivas, M.N. (1966). Social Change in Modern India. University of California Press, pp. 89–117.
11. Thorner, D. (1982). *The agrarian prospect in India: Five lectures on land reform*. Allied Publishers.
12. Weber, M. (1978). *Economy and society: An outline of interpretive sociology*. University of California Press.
13. Government of India. (2015). *Highlights of Agriculture Census 2010–11*. Ministry of Agriculture & Farmers Welfare.
14. Government of India. (2019). *Categorisation of farmers*. Ministry of Agriculture & Farmers Welfare.
15. Kumar, G. (2026). *Agroecological transition pathways for India: Scaling from homesteads to multifunctional landscapes*. International Water Management Institute/
16. Singh, V. (2024). *An inclusive agri-food systems transformation pathway for India*.
17. Pal, B.D., Pauw, K., & Bathla, S. (2025). *India's agrifood system: Structural features and policy priorities*. International Food Policy Research Institute.